आधुनिक सिनेमा का युवा वर्ग पर प्रभाव

अनिल कुमार पाण्डेय
डॉ. श्रीकांत सिंह

सारांश :- **फिल्में समाज का दर्पण होती हैं ये समाज में व्याप्त बुराईयों और विसंगतियों को आम जनमानस के सामने प्रकट कर इसे समूल खत्म करने को प्रेरित करती हैं। फिल्मों के माध्यम से लोगों को जागरूक किया जाता है। लेकिन वर्तमान में कुछ भारतीय फिल्मों में पश्चिमी परम्पराओं के साथ-साथ अश्लीलता दिखाई जा रही है, जिसका भारतीय संस्कृति पर बुरा प्रभाव देखने को मिल रहा है। फिल्मों के रूपहले पर्दे पर छोटे-छोटे भड़काऊ कपड़े पहनकर अभिनेत्रियों द्वारा अभिनय करना हमारे समाज के वास्तविक जीवन में भी देखने को मिल रहा है। चाहे आमिर और सलमान का गजनी और तेरे नाम का हेयर स्टाइल हो या फिर फिल्म धूम में दिखाई गयी बैंक डकैती इन सब के स्पष्ट प्रमाण हैं कि इन्होंने समाज में नकारात्मक प्रभाव डाला है। त्योहारों पर होने वाला बेहिसाब खर्च, चुनावों में होने वाली दबंगई, छोटे शहरों में माफिया राज, कहीं न कहीं समाज ने इसे फिल्मों से ही सीखा है। पुरानी फिल्में सामाजिक सरोकारों से परिपूर्ण होती थीं। वहीं वर्तमान में बनने वाली अधिकतर फिल्में सामाजिक विघटन को बढ़ावा दे रही हैं। वर्तमान में सिनेमा के प्रभाव से आज का युवा खुद को नहीं बचा पा रहा है। वह जीवन के हर पड़ाव में इनसे प्रभावित हो रहा है। फिल्मों का युवावर्ग पर सामाजिक और सांस्कृतिक दोनों रूप में नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। युवाओं पर सिनेमा का यह नकारात्मक प्रभाव समग्र रूप से भारतीय समाज की दशा और दिशा दोनों को ही बदलने में सक्षम है।**

महत्वपूर्ण शब्द :- **नवाचार, चलचित्र, विषय वस्तु, कथानक, समानांतर सिनेमा ।**

प्रस्तावना

वर्तमान में फिल्में मनोरंजन का प्रमुख साधन है और एक शताब्दी पहले भी मनोरंजन का साधन थीं। ये बात अलग है कि तब की फिल्मों में आश्चर्य और जिज्ञासा का स्थान था। और अब नित-नवीन तकनीकों, नये-नये वाद्ययंत्रों, कम्प्यूटर, अति आधुनिक कैमरों और फिल्मों में आये नवाचारों ने इस माध्यम से प्रस्तुत मनोरंजन को कई आयाम दिये हैं। भारत में पहली बार, सिनेमा का पदार्पण सन् 1896 ई. में मुम्बई के वाटसन होटल में ल्यूमीयरे बन्धुओं के छः चलचित्रों के प्रदर्शन से हुआ था। उस समय शायद ही किसी ने यह सोचा हो कि पर्दे पर चलती फिरती जादुई तस्वीरों को अचंभित होकर देख रहा हमारा देश कभी दुनिया के फिल्म उद्योग का सबसे बडा निर्माता बन जाएगा। प्रथम स्वदेशी भारतीय फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' का निर्माण धुण्डीराज गोविन्द फाल्के ने किया था। यह फिल्म भारतीय जनमानस के सामने 3 मई सन् 1913 को प्रस्तुत हुई थी।

शुरूआती दशक में कुल जमा 91 फिल्में ही बनी थीं। जो सारी ही धार्मिक आख्यानों को प्रस्तुत करती थीं। तत्पश्चात सामाजिक फिल्मों के बनने का दौर शुरू हुआ, इतिहास आधारित फिल्में बनीं, भूतप्रेतों पर फिल्में बनीं। 1947 से 1964 तक का समय हिन्दुस्तानी सिनेमा का स्वर्णकाल कहा जाता है। इसी समय सामाजिक प्रतिबद्धता वाला मनोरंजक सिनेमा रचा गया। सत्यजीत राय का 'पाथेर पंचाली' से प्रवेश आणविक विस्फोट की तरह था। हिन्दुस्तानी सिनेमा को अपना पहला कवि मिला, मनुष्य की करुणा का गायक मिला। भारतीय सिनेमा में गीत संगीत का स्वर्णकाल भी इसी समय को माना जाता है। वर्तमान में भारतीय सिनेमा की यही पहचान है। शुरुआत में जहाँ इसका माखौल उड़ाया जाता था वहीं आज यह भारतीय सिनेमा के उर्जा के केंद्र बिन्दु के रूप में स्थापित हो गया है।

नई पीढ़ी में सिनेमा का स्वरूप बदल चुका है। फिल्मों के जरिये समाज को ऐसी चीजें दिखायी जाने लगीं जिससे आमदर्शक वर्ग ही दूर हो गया। फिल्में सिर्फ मनोरंजन का साधन और व्यवसाय का जरिया बन चुकी हैं। फिल्मों के नाम पर यही सब परोसा जा रहा है। वर्तमान में तो पॉपकार्न सिनेमा का निर्माण होने लगा है। पॉपकार्न सिनेमा, जिसमें केवल मनोरंजन हो, कोई संदेश नहीं। पॉपकार्न खाते जाओ और सिनेमा देखते जाओ। आज सिनेमा में परिवर्तन की धारा स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगी है। सिनेमा को आम दर्शकों से दूर करके, उच्चवर्गीय दर्शकों पर केन्द्रित सिनेमा दिखाया जा रहा है और इन्हें ही लक्ष्य बनाकर फिल्मों का निर्माण भी हो रहा

❐ शोधार्थी, पत्रकारिता एवं जनसंचार, महात्मा गांधी चित्रकूट ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म.प्र.)
❐ एसोसिएट प्रोफेसर, इलेक्ट्रानिक मीडिया विभाग, माखनलाल चतुर्वेदी राष्ट्रीय पत्रकारिता एवं संचार विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

है। ऐसे में फिल्में सिर्फ समय गुजारने का माध्यम मात्र बनकर रह गई है। फिल्मों के नाम पर अश्लीलता और हिंसा को बढ़ावा दिया जा रहा है। इसी के चलते पारम्परिक सामाजिक सिनेमा न जाने कब का खत्म हो गया है।

अमेरिकी बच्चों पर किये गए एक शोध के अनुसार 16 वर्ष की आयु प्राप्त करते ही औसतन वे टीवी पर प्रसारित फिल्मों में तकरीबन 33000 हत्याएं और दो लाख हिंसक दृश्य देख चुके होते हैं। स्वाभाविक है इस तरह की विषयवस्तु को ज्यादा देखने पर आक्रामकता बढ़ती है और हिंसा के प्रति मानव जाति में जो स्वाभाविक विरोध होता है, वह कम हो जाता है। वहीं संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रो. सेंटरवेल और उनके सहयोगियों ने एक अध्ययन के निष्कर्ष में पाया कि संयुक्त राज्य अमेरिका और कनाडा में 1950 के दशक में और उसके पश्चात अन्य देशों में ही टीवी का प्रसार हुआ। अध्ययन में पाया गया कि इसके अगले दो दशकों में ही इन देशों में हत्याओं की दर लगभग दो गुनी हो गई। अध्ययन में इसके लिए मुख्य रूप से टीवी को दोषी पाया गया। केवल हत्याएं ही नहीं अन्य हिंसक अपराधों के बढ़ने में भी टीवी पर दिखाई गई हिंसा को ही इस अध्ययन में दोषी पाया गया।

कई ऐसे उदाहरण हैं जिनसे ये बात स्पष्ट हो जाती है कि वर्तमान फिल्मों का युवाओं पर प्रभाव नकारात्मक है। उदाहरण स्वरूप अंग्रेजी फिल्म 'बानी एंड क्लाइड' के प्रदर्शित होने के बाद फिल्म में दिखाई गई अपराध शैली के तरह ही कई अपराध घटित हुए। वही बॉलीवुड की फिल्म 'धूम' के बारे में कहा गया था कि डकैती की कुछ घटनाएं इससे प्रभावित थी और फिल्म आने के बाद चेन स्नेचिंग की घटनाओं की बाढ़ सी आ गई थी। और बॉलीवुड की एक अन्य फिल्म 'जिस्म' के बारे में भी यही कहा गया कि दिल्ली में हुई एक हत्या इससे ही प्रभावित थी वहीं फिल्म 'देल्ही बेली' के आने के बाद युवाओं के वार्तालाप में गालियों का चलन कुछ ज्यादा ही बढ़ गया था।

ऐसा नहीं है कि फिल्मों ने युवाओं में नकारात्मकता का ही भाव भरा है। कई अच्छी फिल्में बनी हैं जिन्होंने न केवल दर्शकों का मनोरंजन किया बल्कि समाज को दिशा भी दी । अच्छी फिल्में समाज के लिए आवश्यक हैं क्योंकि समाज को एक नई दिशा देने और समाज में व्याप्त विसंगतियों को दूर करने में वे समाज की मदद करती हैं और एक नई दृष्टि और संवेदना पैदा करती हैं। एक समय था जब भ्रष्टाचार, दहेज प्रथा, बाल विवाह आदि सामाजिक मुद्दों पर आधारित फिल्में बनायी जाती थीं और लोगों में फिल्मों के माध्यम से जागरूकता पैदा की जाती थी। एक समय था जब सभी फिल्में पूरे परिवार के साथ बैठकर देखी जा सकती थीं, लेकिन वर्तमान में गिनती की कुछ फिल्मों को छोड़कर सभी फिल्मों में अश्लीलता के सिवाए न तो अच्छी पटकथा होती है और न ही रोचकता। ऐसी फिल्मों को परिवार के साथ बैठकर नहीं देखा जा सकता है।

भारतीय फिल्मों के पितामह दादा साहब फाल्के को उस समय ही निकट भविष्य में बनने वाली फिल्मों की आहट मिल गई थी। तभी तो उन्होंने अंग्रेजों द्वारा बनाई 'पैरियर कमेटी' के सामने सन् 1927 में कहा था कि 'आने वाले समय में फिल्म निर्माण पर व्यय बढ़ता जाएगा और कथा में सामाजिक सरोकार धीरे-धीरे घटता जाएगा।' आज के समय में इसी तरह की फिल्मों का निर्माण हो रहा है। जिसकी आशंका दादा साहब फाल्के ने सिनेमा के शुरुआती दौर में ही व्यक्त कर दी थी। सिनेमा में आए इसी बदलाव ने युवावर्ग की कथनी- करनी में आमूल-चूल परिवर्तन कर दिया है। युवाओं के बात करने का अंदाज, उठना बैठना, खान-पान, पहनावा, यहाँ तक की धर्मों के प्रति उनका नजरिया भी फिल्मों से तैयार होता है। ये सत्य है कि सिनेमा समाज से लेकर समाज को ही देता है। तभी तो सिनेमा को समाज का छोटा प्रतिबिम्ब कहा जाता है। लेकिन वर्तमान समय का सिनेमा समाज से लेता कम, देता ज्यादा है। यानी कि ये समझना बेहद मुश्किल है कि सिनेमा समाज से बनता है या सिनेमा से समाज।

शोध समस्या

सिनेमा समाज में बनता है, समाज के लिए बनता है और एक नये समाज का निर्माण करता है। 'राजा हरिश्चन्द्र' और 'आलमआरा' से लेकर वर्तमान दौर तक हिन्दी सिनेमा ने एक लम्बी दूरी तय की है। इस दौरान भारतीय सिनेमा ने समाज के विभिन्न पहलुओं को, घटनाओं को पर्दे पर दर्शाया है। भारतीय सिनेमा का इतिहास बहुत ही उज्ज्वल है। पुरानी फिल्में जहाँ सामाजिक सरोकारों से परिपूर्ण होती थीं वहीं वर्तमान में बनने वाली फिल्में सामाजिक विघटन को बढ़ावा दे रही हैं। वर्तमान में सिनेमा के प्रभाव से आज का युवा खुद को नहीं बचा पा रहा है। जीवन का हर पड़ाव इनसे प्रभावित हो रहा है। 'आधुनिक सिनेमा का युवा वर्ग पर प्रभाव' विषय का चयन शोध हेतु इसीलिए किया गया है ताकि आधुनिक सिनेमा का युवा वर्ग पर पड़ने वाले इसके प्रभावों का अध्ययन व अवलोकन किया जा सके।

अध्ययन का क्षेत्र- भोपाल शहर (म. प्र.)

भोपाल, देश के हृदय प्रदेश के नाम से प्रसिद्ध मध्यप्रदेश राज्य की राजधानी है। प्रदेश की राजनैतिक राजधानी होने के साथ ही यह शहर कला, शिक्षा, चिकित्सा और मनोरंजन के क्षेत्र में देश के प्रमुख शहरों में से एक है। शिक्षा का केन्द्र होने के कारण देश-प्रदेश

से बड़ी तादाद में छात्र यहाँ पढ़ाई के लिए आते हैं। घर से बाहर होने के कारण फिल्में उनके मनोरंजन का प्रमुख साधन होती हैं। भोपाल में सिनेमाघरों की अच्छी तादात है। सिनमाघरों मे आने वाले दर्शकों में युवाओं की बहुलता होती है। देश में बनने वाली अधिकांश फिल्में युवा चरित्रों पर आधारित होने से युवाओं की इन फिल्मों को देखने में विशेष रुचि होती है। सिनेमा प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से एक सामाजिक उत्पाद है, ऐसे में युवा मन पर इनका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। भोपाल शहर की उपरोक्त वर्णित विशेषताओं के कारण प्रस्तुत शोधपत्र के लिए आवश्यक प्राथमिक आंकड़ों के एकत्रीकरण के लिए यह शहर सर्वोत्तम शोध क्षेत्र बन जाता है।

अध्ययन के उद्देश्य

- युवावर्ग का फिल्मों में रूझान का पता लगाना?
- क्या वर्तमान फिल्मों में सामाजिक प्रतिबद्धता की कमी आयी है इस बात का पता लगाना?
- इस बात का पता लगाना कि क्या फिल्में अपराध (चोरी, हत्या, लूट, बलात्कार) को बढ़ावा देती हैं?
- इस बात का पता लगाना कि वर्तमान में बनने वाली फिल्में क्या समाज पर सांस्कृतिक आघात की तरह हैं?
- इस बात का मूल्यांकन करना कि आम युवा के व्यक्तित्व पर फिल्मों का कैसा प्रभाव पड़ रहा है?
- इस बात का मूल्यांकन करना कि क्या फिल्में समाज में आए नैतिक पतन के लिए जिम्मेदार हैं?

अध्ययन की उपकल्पना

- वर्तमान फिल्मों में सामाजिक प्रतिबद्धता की कमी आयी है।
- वर्तमान फिल्में अपराध (चोरी, हत्या, लूट, बलात्कार) को बढ़ावा देती हैं।
- युवाओं के व्यक्तित्व पर फिल्मों का प्रभाव पड़ता है।
- वर्तमान फिल्में समाज पर सांस्कृतिक आघात की तरह है।
- वर्तमान फिल्में समाज में आए नैतिक पतन के लिए जिम्मेदार हैं।

शोध विधि

इस अध्ययन में, भारतीय सिनेमा के वर्तमान चलन से आम भारतीय युवाओं पर पड़ने वाले प्रभाव को जानने का प्रयास किया गया है। इसकी जाँच के लिए प्राथमिक और द्वितीयक दोनों तरह के आकंड़ों को आधार बनाया गया है। प्राथमिक समंकों को एकत्रित करने के लिए सर्वेक्षण शोध विधि के अन्तर्गत प्रश्नावली शोधयंत्र का इस्तेमाल किया गया है। शोध संबंधित आंकड़ों की प्राप्ति हेतु न्यादर्श का चयन यादृच्छिकी न्यादर्शन (Random Sampling) की लॉटरी विधि, यथांश (Quota) न्यादर्शन एवम् उद्देश्यानुसार न्यादर्शन पद्धति (Purposive Sampling) का इस्तेमाल करके किया गया है।

न्यादर्श का चुनाव

शोध संबंधित आंकड़े भोपाल शहर अवस्थित पाँच प्रमुख सिनेमाघरों (भारत, रंगमहल, फन सिनेमा, संगम, ज्योति) में फिल्म देखने आए युवाओं से एकत्रित किए गए हैं। इन सिनेमाघरों का चयन यादृच्छिकी न्यादर्शन (Random Sampling) की लॉटरी विधि से किया गया है। तत्पश्चात प्राथमिक समंकों के संग्रह के लिए यथांश न्यादर्शन (Quota Sampling) का प्रयोग किया गया है। जिसमें समंकों को स्त्री पुरूष के बराबर अनुपात में एकत्रित किया गया है। इस शोध में संकलित न्यादर्श के इकाईयों की संख्या 100 है जिसमें से 50 युवकों तथा शेष 50 युवतियों से आंकड़ें इकट्ठे किए गए हैं। इन युवक, युवतियों का चयन उद्देश्यानुसार न्यादर्शन पद्धति (Purposive Sampling) का इस्तेमाल करके किया गया है। ताकि प्रस्तुत शोध में पूरे भोपाल शहर का संतुलित व समुचित प्रतिनिधित्व प्राप्त हो सके।

तथ्यों का संकलन

फेयर चाइल्ड ने तथ्यों के संबंध में कहा है कि 'कोई प्रदर्शित करने या प्रकाशित करने योग्य वास्तविकता का मद, पद या विषय ही तथ्य है।' इसका संबंध एक वास्तविक घटना से होता है। इसमें शोधकर्ता का ज्ञान एवं अनुभव विस्तृत होता है। तथ्यों का बोध अनुभव के द्वारा ही होता है। इस शोधकार्य में प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के स्त्रोतों पर आधारित तथ्यों का उपयोग किया गया है।

प्रस्तुत शोधपत्र में सर्वेक्षण शोधविधि के अंतर्गत प्रश्नावली के माध्यम से प्राथमिक समंकों को एकत्रित किया गया है। प्रश्नावली में 10 सवालों को समाहित किया गया है और इन्हीं 10 सवालों के माध्यम से युवावर्ग पर आधुनिक फिल्मों के पड़ने वाले प्रभाव संबंधी आंकड़ों को एकत्रित किया गया है।

आंक़डों का सारणीकरण और विश्लेषण

सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण आगे प्रश्नवार ढंग से किया गया है ताकि युवा वर्ग पर पड़ने वाले आधुनिक सिनेमा के प्रभावों को जाँचा जा सके। प्रश्नावली के माध्यम से प्राप्त आंकड़ों का विश्लेषण करने पर चौंकाने वाले तथ्य सामने आते हैं।

प्रश्न- 1

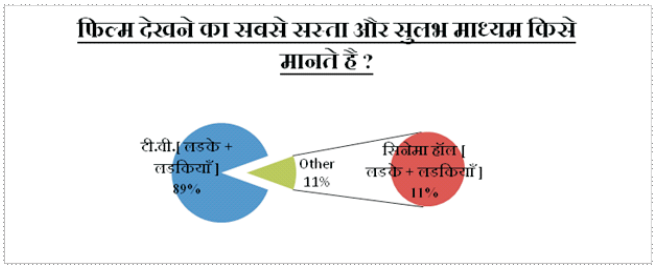

पहले प्रश्न, टेलीविजन या सिनेमाहाल में से फिल्म देखने का सस्ता और सुलभ माध्यम कौन सा है। इसके उत्तर में 92 फीसदी लड़कियों व 86 फीसदी लड़कों ने टीवी माना वहीं 08 फीसदी लडकियों तथा 14 फीसदी लड़कों ने सिनेमाहाल को सस्ता एवं सुलभ साधन माना है।

प्रश्न- 2

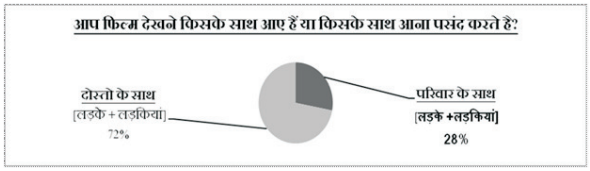

दूसरे प्रश्न, आप फिल्म देखने किसके साथ आए हैं या आना पसंद करते हैं। इसके उत्तर में 88 फीसदी लड़कों ने तथा 56 फीसदी लड़कियों ने माना कि वे फिल्म देखने दोस्तों के साथ आते हैं या आना पसंद करते है। जबकि परिवार के साथ फिल्म देखने जाने वालो में लड़कों का प्रतिशत 12 व लड़कियों का 44 रहा।

प्रश्न- 3

प्रश्न क्रमांक		कुल उत्तरदाता	लड़के		लड़कियाँ	
			सामाजिक	मनोरंजन	सामाजिक	मनोरंजन
प्रश्न 3	आप किस तरह की फिल्म देखना पसंद करते हैं?	100	11	39	13	37

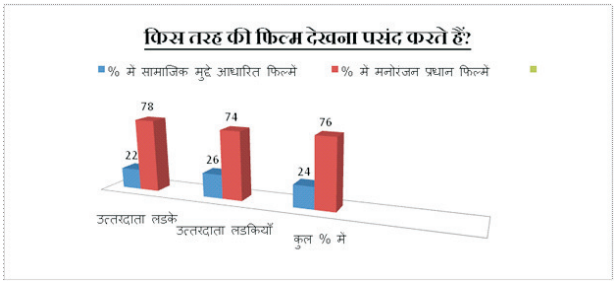

तीसरे प्रश्न में, 78 फीसदी लड़कों के साथ 74 फीसदी लड़कियों का मानना था कि वे मनोरंजन को प्रधानता देने वाली फिल्में देखना पसंद करते है। शेष ने सामाजिक सरोकार पर आधारित फिल्मों को देखने की बात मानी।

चौथे प्रश्न, फिल्मों के डॉयलाग तथा अभद्र भाषा की नकल करने के जवाब में 92 फीसदी लड़कों के साथ 94 फीसदी लड़कियों ने हाँ में उत्तर दिया, शेष ने नकल नहीं करने की बात कही।

पाँचवे प्रश्न, अपराध को बढ़ावा देने में फिल्में उत्प्रेरक का काम करती हैं? इस पर 54 फीसदी लड़कों के साथ 68 फीसदी लडकियों ने हाँ में जवाब दिया शेष ने इसे नकार दिया। यानी कि आधे से अधिक लोगों ने माना कि फिल्में समाज में घटित होने वाली चोरी, हत्या, डकैती जैसी आपराधिक घटनाओं को बढ़ावा देती हैं।

छठवें प्रश्न, क्या वर्तमान संगीत में प्रयुक्त होने वाली भाषा भारतीय संस्कृति के अनुरूप है? के जवाब में 30 फीसदी लड़कों के साथ 10 फीसदी लड़कियों ने हाँ में जवाब दिया शेष 70 फीसदी लडकों ने तथा 90 फीसदी लड़कियों ने माना कि वर्तमान संगीत में प्रयुक्त होने वाली भाषा भारतीय संस्कृति के अनुरूप नहीं है।

सातवें प्रश्न में, क्या सामाजिक जागरूकता को बढ़ाने वाली फिल्मों में कमी आयी है ? के जवाब में चौंकाने वाले आंकड़ें सामने आएं, 78 फीसदी लड़कों तथा 82 लड़कियों दोनों ने हीं माना कि सामाजिक जागरूकता बढ़ाने वाली फिल्मों में कमी आई है। जबकि 22 फीसदी लड़के 18 लड़कियां इस कथन से असहमत दिखाई दिये।

आठवें प्रश्न, क्या फिल्मों से समाज पर पड़ने वाला प्रभाव सकारात्मक है? इस पर 10 फीसदी लड़कों के साथ 22 फीसदी लड़कियों ने माना कि वर्तमान फिल्मों का समाज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है। वहीं 90 फीसदी लड़कों के साथ 78 फीसदी लड़कियों ने माना कि वर्तमान में बनने वाली फिल्में समाज पर नकारात्मक प्रभाव डाल रही हैं।

नवें प्रश्न, क्या फिल्में हमारे समाज की दशा और दिशा तय करने में सक्षम है ? के जवाब में 60 फीसदी लड़कियों तथा 70 फीसदी लड़कों का जवाब हाँ में तथा शेष 40 फीसदी लड़कियों तथा 30 फीसदी लड़कों का जवाब नहीं में आया।

दसवें प्रश्न, क्या वर्तमान फिल्में भारतीय समाज, संस्कृति और संस्कारों की खिलाफत करती हैं? के जवाब में 86 फीसदी लड़कियों तथा 82 फीसदी लड़कों का जवाब हाँ में तथा शेष 14

आंकड़ों का सारणीयन और विश्लेषण (प्रश्न क्रमांक 4 से 10)

प्रश्न	क्रं	कुल उत्तरदाता	उत्तरदाताओं की संख्या लड़के		उत्तरदाताओं की संख्या लड़कियाँ		उत्तरदाता लड़के		उत्तरदाता लड़कियाँ		कुल%	
			हाँ	नहीं	हाँ	नहीं	% में हाँ	% में नहीं	% में हाँ	% में नहीं	% में हाँ	% में नहीं
प्रश्न 4	क्या आपने कभी फिल्मों को देखकर किसी फिल्मी डॉयलाग या अभद्र भाषा की नकल करने की कोशिश की है ?	100	46	04	47	03	92	08	94	06	93	07
प्रश्न 5	क्या सामाजिक कुरातियों (चोरी, हत्या, डकैती, बलात्कार) को बढ़ाने में फिल्में उत्प्रेक का काम करती है ?	100	27	23	34	16	54	46	68	32	61	39
प्रश्न 6	क्या वर्तमान संगीत में प्रयुक्त होने वाली भाषा भारतीय संस्कृति के अनुरूप है ?	100	15	35	5	45	30	70	10	90	20	80
प्रश्न 7	क्या सामाजिक जागरूकता को बढ़ाने वाली फिल्मों में भी कमी आयी है ?	100	39	11	41	09	78	22	82	18	80	20
प्रश्न 8	क्या फिल्मों से समाज पर पड़ने वाला प्रभाव सकारात्मक है ?	100	05	45	11	39	10	90	22	78	16	84
प्रश्न 9	क्या फिल्में हमारे समाज की दशा और दिशा तय करने में सक्षम हैं ?	100	35	15	30	20	70	30	60	40	65	35
प्रश्न 10	क्या वर्तमान फिल्में भारतीय समाज, संस्कृति और संस्कारों की खिलाफत करती हैं ?	100	41	09	43	07	82	18	86	14	84	16

तालिका- 2

प्राप्त आंकड़ों का आरेखीय प्रदर्शन

(प्रश्न क्रमांक 4 से प्रश्न क्रमांक 10 तक)

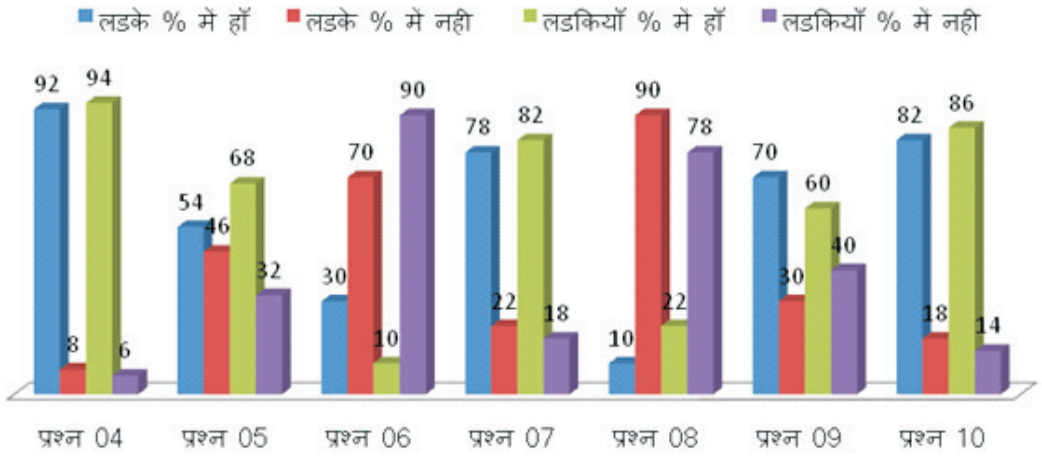

फीसदी लड़कियों व 18 फीसदी लड़कों का जवाब नहीं में प्राप्त हुआ।

निष्कर्ष

इस शोध अध्ययन से पता चला कि वर्तमान में बनने वाली फिल्मों में से कुछ एक को छोड़ दिया जाए तो सारी फिल्में हमारी संस्कृति और सभ्यता की खिलाफत करती नजर आती हैं। कभी भारतीय संस्कृति और मूल्यों की पैराकार रही फिल्में वर्तमान समय में समाज के सामने हिंसात्मक अश्लील और भड़काऊ चीजें परोसने लगी हैं। फिल्मों के साथ ही युवाओं के आचार-विचार, रहन-सहन में व्यापक परिवर्तन आया है। इसके लिए कहीं न कहीं हमारा सिनेमा ही जिम्मेदार है। जिसने पश्चिमीकरण को ही अपना सब कुछ मान लिया है। फिल्में विशुद्ध व्यवसाय बन गई हैं। सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों के विश्लेषण से ये पता चलता है कि जागरूकता बढ़ाने वाली फिल्मों में कमी आई है। इसका प्रमुख कारण दर्शकों का सामाजिक सरोकार की तुलना में मसाला प्रधान मनोरंजक फिल्मों को ज्यादा पसंद करना है। युवाओं का आचार-विचार, सोचने समझने का तरीका खानपान या ये कहें कि सारी दिनचर्या ही फिल्मों से प्रभावित है तो इसमे कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। ऐसा कहा जाता है कि 70 के दशक के बाद भारत में मूल्यों की राजनीति बंद हो गई और कुछ इसके आगे पीछे मूल्यों से जुड़ा सिनेमा भी समाज से जुदा हो गया। यह ऐसा दौर है कि भारतीय सिनेमा में भारत खोजना कठिन हो गया है। दशकों पुरानी मान्यता ध्वस्त हो चुकी है कि नैतिक रूप से ठीक फिल्में ही समाज में चलती हैं। ब्रिटेन के वैज्ञानिक प्रो. ऐलिजाबेथ न्यूसन तथा उनके सहयोगियों ने एक वैज्ञानिक शोध के माध्यम से स्पष्ट किया है कि टी.वी. व बड़े पर्दों पर दिखायी जा रही फिल्मों में हिंसा का बच्चों और युवाओं में नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। इसी वजह से बार- बार कहा जाता है कि हिंसा-अपराध की वारदातें सिनेमा में दिखाते समय बहुत सावधानी बरतने की जरूरत है। विशेषकर आपराधिक तौर तरीकों को आकर्षक ढंग से प्रस्तुत करने एवं विस्तार से बताने में परहेज जरूरी है।

सुझाव

1- सिनेमा के प्रारंभिक दशकों में सामाजिक सरोकार आधारित फिल्में बनाई जाती थी लेकिन आर्थिक उदारीकरण के पश्चात सामाजिक विषय सिनेमा से गायब से हो गए हैं। जिन पर पुनः फिल्म बनाने की आवश्यकता है।

2- फिल्में समाज में व्याप्त बुराइयों और विसंगतियों को समाज के सामने प्रदर्शित कर इन्हें खत्म करने के लिए प्रेरित करती हैं। लेकिन आज के दौर के सिनेमा का मुख्य विषय ही हिंसा और अश्लीलता हो गया है। ऐसे में भारतीय संस्कृति की समृद्ध परंपरा को ध्यान में रखते हुए फिल्मों का निर्माण समाज हित में होगा।

3- हमारे देश के हर गली-कूचे, स्थानीय मान्यताओं, कहानी-किस्सों से भरे पड़े हैं। ऐसे में स्थानीय विषयों को फिल्मों में जगह मिलने से न केवल फिल्मों की पटकथा मजबूत होगी बल्कि फिल्म निर्माण के लिए नए विषय भी प्राप्त होंगे।

4- वर्तमान में ऐसी फिल्मों की संख्या में कमी आयी है। जो कलात्मक, सृजनात्मक होने के साथ समाज में चेतना फैलाने वाली हों। ऐसे में 'रंग दे बसंती', 'लगे रहो मुन्नाभाई', 'अ वेडनेसडे', 'भाग मिल्खा भाग', 'तारे जमीं पर' जैसी फिल्में अन्य के लिए आदर्श बन सकती है। ऐसी सभी फिल्मों को मनोरंजन कर में सरकार से रियायत मिलना चाहिए। क्योंकि इस तरह की छूट सिनेमा बनाने वालों को सार्थक फिल्म बनाने के लिए प्रेरित करती है।

5- हिंसा तथा अपराध की घटनाओं पर आधारित फिल्मों में, अपराध करने के तौर- तरीकों को बहुत विस्तार एवम् हिंसा के नए तरीकों को आकर्षक और मनोरंजक ढंग से प्रस्तुत करने में सावधानी बरती जानी चाहिए ।

6- फिल्मों में अनावश्यक रूप से असभ्य और अमर्यादित शब्दों का इस्तेमाल न किया जाए ।

7- फिल्मों के रीमेक के बजाय नए विषयों पर फिल्म बनानी चाहिए साथ ही समानांतर सिनेमा के निर्माण में प्रोत्साहन और सरकारी सहयोग भी मिलना चाहिए ।

संदर्भ-

1. जवरीमल्ल पारखः लोकप्रिय सिनेमा और सामाजिक यथार्थ, 2001, दिल्ली, अनामिका पब्लिशर्स
2. डॉ. किशोर वासवानीः सिनेमाई भाषा और हिन्दी संवादों का विश्लेषण, 1984, नई दिल्ली,हिन्दी बुक सेन्टर
3. भवानीलालः वॉलीवुडनामा, 2011, दिल्ली,भारतीय सत्साहित्य प्रकाशन
4. राही मासूम रजा और प्रो कुंवर पाल सिंह, सिनेमा और संस्कृति, 2001,नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन
5. विजय अग्रवालः सिनेमा और समाज, दिल्ली सत्साहित्य प्रकाशन
6. विनोद दासः भारतीय सिनेमा का अन्तरूकरण, नई दिल्ली, मेधा बुक्स
7. रमिन्दर कौर और अजय सिन्हाः वॉलीवुड,नई दिल्ली,सेज पब्लिकेशन
8. प्रो.उमा त्रिपाठी और धरवेश कठेरियाः (मार्च 2013) 'भारतीय सिनेमा के सौ वर्ष और बदलते सामाजिक परिदृश्य का विश्लेषण'रू मीडिया मीमांसा, खंड 6, अंक सं 2-3
9. राजेन्द्र ओझाः 80 ग्लोरियस ईयर आफ इंडियन सिनेमा, 1994,मुम्बई ,स्क्रीन वर्ल्ड पब्लिकेशन
10. प्रवीण दीक्षितः जनमाध्यम और पत्रकारिता, 1982, कानपुर
11. विनोद तिवारीः फिल्म पत्रकारिता, 2007,नई दिल्ली, वाणी प्रकाशन